Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

# जाति, वर्ण और सामाजिक न्याय: ऐतिहासिक दृष्टि, आधुनिक विज्ञान और डॉ. अंबेडकर के विचार

**सुरेश कुमार[1], डा० संजय कुमार[2]**

[1]शोधार्थी, समाज विज्ञान स्कूल,दीनदयाल उपाध्याय अध्ययन केंद्र, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय,धर्मशाला - 176215।

[2]सहायक आचार्य, समाज विज्ञान स्कूल, दीनदयाल उपाध्याय अध्ययन केंद्र, हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला- 176215।

ई मेल -monubhareri@gmail.com

***सारांश:***

भारत की सामाजिक संरचना को समझने के लिए जाति व्यवस्था का अध्ययन अपरिहार्य है। जाति, जो प्रारंभ में वैदिक समाज में केवल एक **कार्य-विभाजन की पद्धति** थी, समय के साथ जन्म आधारित कठोर व्यवस्था में बदल गई। ऋग्वेद और महाभारत जैसे ग्रंथों में वर्ण व्यवस्था को कर्म और गुण पर आधारित बताया गया है, किंतु मनुस्मृति और उत्तरवर्ती काल के सामाजिक परिवर्तनों ने इसे स्थायी और जन्मगत बना दिया। परिणामस्वरूप भारतीय समाज में **असमानता, भेदभाव और शोषण** गहराई से पैठ गए। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने जातिवाद को भारत के सामाजिक जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप माना। उनके अनुसार जब तक जाति आधारित भेदभाव समाप्त नहीं होगा, तब तक न तो व्यक्ति स्वतंत्र होगा और न ही समाज प्रगति कर सकेगा। अंबेडकर ने इस समस्या के समाधान के लिए शिक्षा, संवैधानिक प्रावधान और सामाजिक चेतना को आवश्यक बताया। परंतु उन्होंने अनुभव किया कि केवल क़ानून से जातिवाद नहीं मिटेगा, बल्कि इसके लिए सामाजिक और धार्मिक पुनर्निर्माण आवश्यक है। इसी पृष्ठभूमि में उन्होंने 1956 में बौद्ध धर्म को अपनाया और अपने अनुयायियों से भी धर्म परिवर्तन का आह्वान किया। अंबेडकर का धर्म परिवर्तन केवल धार्मिक आस्था का प्रश्न नहीं था, बल्कि यह **समानता, आत्मसम्मान और सामाजिक न्याय की खोज** का प्रतीक था। आधुनिक समय में **जेनेटिक्स और समाजशास्त्र** ने यह सिद्ध किया है कि जाति का कोई जैविक या आनुवंशिक आधार नहीं है। भारत के विभिन्न समुदायों के बीच किए गए जीनोम अध्ययन स्पष्ट करते हैं कि सभी जातियों और समूहों में व्यापक जीन प्रवाह हुआ है। इस प्रकार, जाति केवल एक **सांस्कृतिक और सामाजिक निर्मिति** है, न कि कोई प्राकृतिक या वैज्ञानिक सत्य। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जन्म आधारित श्रेष्ठता या हीनता का कोई वैज्ञानिक औचित्य नहीं है। वैदिक समाज की मूल भावना और आधुनिक विज्ञान दोनों समानता, कर्मप्रधानता और मानवीय एकता पर बल देते हैं। जहाँ वैदिक दृष्टिकोण कहता है कि मनुष्य का मूल्य उसके कर्म और गुणों से है, वहीं जेनेटिक्स यह प्रमाणित करता है कि सभी मनुष्य समान जैविक आधार साझा करते हैं। अंबेडकर का धर्म परिवर्तन इसी विचारधारा का आधुनिक प्रतिरूप है, जिसमें धर्म का चयन सामाजिक न्याय और मानवता के उत्थान के लिए किया गया। समकालीन भारत में जातिवाद भले ही संवैधानिक रूप से अवैध घोषित हो चुका है, किंतु इसकी मानसिकता अब भी समाज में मौजूद है। शिक्षा, आर्थिक अवसरों और सामाजिक जागरूकता से इसमें कमी आई है, परंतु अभी भी लंबा रास्ता तय करना शेष है। इस संदर्भ में यह शोध यह संदेश देता है कि जातिवाद केवल ऐतिहासिक या धार्मिक समस्या नहीं है, बल्कि यह **सामाजिक मानसिकता और संरचनात्मक असमानता** से जुड़ा हुआ प्रश्न है।

संकेत शब्द: जाति, वर्ण, सामाजिक संरचना, न्याय, अंबेडकर दृष्टिकोण; धर्म परिवर्तन, शिक्षा और मानव जेनेटिक विविधता; सामाजिक गतिशीलता और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण ।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

**प्रस्तावना:**

भारत में जाति और वर्ण व्यवस्था का ऐतिहासिक महत्व:

भारत की सामाजिक संरचना में जाति और वर्ण व्यवस्था का विशेष स्थान रहा है। वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था मूलतः **कार्य-विभाजन और सामाजिक संगठन** पर आधारित थी, जहाँ व्यक्ति का मूल्य उसके **कर्म और गुणों** से तय होता था, न कि जन्म से। ऋग्वेद और महाभारत में यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि कोई भी व्यक्ति अपने आचरण और कार्य के आधार पर किसी भी वर्ण का हो सकता था। कालांतर में, विशेषकर मनुस्मृति और उत्तरवर्ती सामाजिक परंपराओं में, यह व्यवस्था जन्म-आधारित कठोर जाति प्रथा में परिवर्तित हो गई। इससे सामाजिक असमानता, ऊँच-नीच और भेदभाव बढ़ा। मध्यकाल और औपनिवेशिक काल में जाति ने भारतीय समाज की पहचान और संरचना को गहराई से प्रभावित किया। इतिहास में जाति और वर्ण व्यवस्था का महत्व इसलिए भी है कि इसने एक ओर समाज को **संगठित और श्रम विभाजित** करने का ढाँचा दिया, वहीं दूसरी ओर यह **सामाजिक गतिशीलता और समानता** को बाधित करने वाला तंत्र भी बन गई (Ghurye, 1950)।

आधुनिक समय में जाति और वर्ण व्यवस्था की चुनौतियाँ:

भारतीय संविधान ने समानता का अधिकार और भेदभाव-निषेध के सिद्धांत को स्पष्ट रूप से स्थापित किया है। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा, आरक्षण और सामाजिक न्याय से जुड़ी नीतियों ने जातिगत असमानता को कम करने का प्रयास किया है। फिर भी, आधुनिक समय में जाति व्यवस्था पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है। यह सामाजिक जीवन, राजनीति, अर्थव्यवस्था और मानसिकता के स्तर पर अनेक चुनौतियों के रूप में विद्यमान है। सबसे पहली चुनौती है **सामाजिक भेदभाव**। शहरी क्षेत्रों में भले ही जातिगत पहचान का प्रभाव कम दिखाई देता हो, लेकिन ग्रामीण समाज में आज भी निचली जातियों के साथ भेदभाव और छुआछूत जैसी प्रथाएँ देखने को मिलती हैं। कई जगह दलितों और पिछड़े वर्गों को मंदिरों में प्रवेश, सामुदायिक जलस्रोतों के उपयोग या विवाह-संबंधों में प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है। दूसरी चुनौती है **आर्थिक असमानता**। ऐतिहासिक रूप से उच्च जातियों को भूमि, शिक्षा और संसाधनों तक अधिक पहुँच मिली, जबकि निम्न जातियों को हाशिए पर रखा गया। इस कारण आज भी सामाजिक-आर्थिक असमानता गहराई से बनी हुई है। आरक्षण नीति ने शिक्षा और रोज़गार के अवसर बढ़ाए हैं, परंतु समाज के बड़े हिस्से को अब भी गरीबी और बेरोज़गारी का सामना करना पड़ता है। तीसरी बड़ी चुनौती है **राजनीतिकरण और वोट बैंक की राजनीति**। स्वतंत्र भारत में जाति एक प्रमुख राजनीतिक पहचान बन गई है। चुनावों में जातिगत समीकरण अक्सर उम्मीदवारों के चयन और नीतिगत फैसलों को प्रभावित करते हैं। इसका परिणाम यह है कि जातिवाद केवल सामाजिक समस्या न रहकर राजनीतिक हथियार भी बन गया है, जिससे सामाजिक समरसता कमजोर होती है। चौथी चुनौती **मानसिकता और सामाजिक दृष्टिकोण** से जुड़ी है। शिक्षा और आधुनिकता के बावजूद कई लोगों की सोच अब भी जातिगत श्रेष्ठता और हीनता की अवधारणाओं से प्रभावित है। विवाह, रिश्तेदारी और सामाजिक मेलजोल में जाति की भूमिका आज भी निर्णायक रहती है। मैट्रिमोनियल विज्ञापनों और पारिवारिक परंपराओं में इसका स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। पाँचवीं चुनौती है **जातिगत हिंसा और सामाजिक संघर्ष**। समय-समय पर विभिन्न राज्यों में आरक्षण को लेकर आंदोलन, दंगे और जातिगत संघर्ष होते रहे हैं। ये घटनाएँ यह दर्शाती हैं कि जाति आज भी सामाजिक तनाव और हिंसा का कारण बन सकती है।

संक्षेप में, आधुनिक भारत की सबसे बड़ी समस्या यह है कि संविधानिक मूल्यों और सामाजिक वास्तविकताओं के बीच अभी भी गहरी खाई है। क़ानून ने समानता की गारंटी दी है, परंतु सामाजिक मानसिकता और परंपरागत संरचनाएँ उसे पूरी तरह स्वीकार नहीं कर पाई हैं। जाति व्यवस्था की यह जड़ता न केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बाधित करती है बल्कि एक समतामूलक समाज के निर्माण में भी बाधा डालती है। इसलिए आधुनिक भारत के लिए सबसे बड़ी चुनौती यह है कि संवैधानिक प्रावधानों, शिक्षा और सामाजिक जागरूकता के माध्यम से जातिगत भेदभाव को पूरी तरह समाप्त कर **एक ऐसे समाज का निर्माण किया जाए जो समानता, न्याय और मानवता के मूल्यों पर आधारित हो** (Egorova, 2010)।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

शोध का उद्देश्य:

अतीत और वर्तमान की टकराहट को समझकर समाधान सुझाना: भारतीय समाज का इतिहास जाति और वर्ण व्यवस्था से गहराई से जुड़ा हुआ है। प्राचीन काल में वर्ण व्यवस्था मुख्यतः **कर्म, गुण और योग्यता** पर आधारित थी, परंतु समय के साथ यह जन्म-आधारित कठोर जाति प्रथा में बदल गई। इस परिवर्तन ने समाज में असमानता, भेदभाव और शोषण को जन्म दिया। आधुनिक काल में संविधान और शिक्षा के प्रभाव से समानता और सामाजिक न्याय को महत्व दिया जाने लगा। किंतु सामाजिक मानसिकता और परंपरागत संरचनाओं में अब भी अतीत की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। इस शोध का मुख्य उद्देश्य इसी **अतीत और वर्तमान की टकराहट** को गहराई से समझना है। एक ओर अतीत की जाति व्यवस्था ने समाज को संगठित करने का ढाँचा दिया, लेकिन बाद में वह **भेदभाव और दमन का उपकरण** भी बन गई। दूसरी ओर वर्तमान में संविधान, कानून और आधुनिक विज्ञान एक समान और न्यायपूर्ण समाज का मार्ग सुझाते हैं। इन दोनों प्रवृत्तियों के बीच का विरोधाभास भारतीय समाज के लिए निरंतर संघर्ष और चुनौती का कारण है। शोध का उद्देश्य यह भी है कि इस टकराहट का विश्लेषण केवल ऐतिहासिक या धार्मिक दृष्टि से नहीं, बल्कि **समाजशास्त्रीय और वैज्ञानिक दृष्टिकोण** से भी किया जाए। आधुनिक जेनेटिक्स यह स्पष्ट कर चुका है कि जाति का कोई जैविक आधार नहीं है। इसका अर्थ यह है कि जन्म के आधार पर श्रेष्ठता और हीनता का कोई वैज्ञानिक औचित्य नहीं है। अतः समाज को यह समझना होगा कि जाति केवल सांस्कृतिक और सामाजिक निर्मिति है, जिसे समय के अनुसार बदला जा सकता है। इसके अतिरिक्त शोध यह भी खोजता है कि **डॉ. अंबेडकर जैसे सुधारकों की दृष्टि** और वैदिक परंपरा की मूल भावना को जोड़कर वर्तमान समाज के लिए क्या समाधान निकाले जा सकते हैं। अंबेडकर का धर्म परिवर्तन केवल धार्मिक घटना नहीं थी, बल्कि यह सामाजिक न्याय और आत्मसम्मान की खोज थी। इस संदर्भ में शोध का उद्देश्य यह देखना है कि कैसे ऐतिहासिक अनुभव और आधुनिक संवैधानिक मूल्यों को मिलाकर जातिवाद के उन्मूलन का व्यावहारिक रास्ता तैयार किया जा सकता है।

**साहित्य समीक्षा:**

वैदिक साहित्य, विशेषकर ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और उपनिषदों में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। इन ग्रंथों में वर्ण को समाज के **संगठन और श्रम विभाजन** के आधार के रूप में देखा गया था, न कि कठोर जाति-प्रथा के रूप में। सबसे प्रसिद्ध संदर्भ ऋग्वेद के **पुरुष सूक्त** में मिलता है, जिसमें ब्रह्मा के विराट पुरुष के अंगों से चार वर्णों की उत्पत्ति का वर्णन है— ब्राह्मण मुख से, क्षत्रिय भुजाओं से, वैश्य जंघाओं से और शूद्र चरणों से। इस प्रतीकात्मक व्याख्या का आशय यह था कि समाज के सभी वर्ग परस्पर पूरक हैं और प्रत्येक का कार्य समाज की संरचना में आवश्यक है। उपनिषदों और ब्राह्मण ग्रंथों में भी वर्ण की चर्चा मिलती है। प्रारंभिक काल में यह व्यवस्था **कर्म और गुण** पर आधारित बताई गई थी। उदाहरण के लिए, *महाभारत* और *भगवद्गीता* दोनों में यह उल्लेख है कि वर्ण व्यवस्था गुण और स्वभाव के अनुसार निर्धारित होती है, न कि जन्म से। गीता (अध्याय 4, श्लोक 13) में कृष्ण स्पष्ट करते हैं— "चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।" इससे यह स्पष्ट होता है कि मूल वैदिक दृष्टिकोण में वर्ण का आधार व्यक्ति का कार्य और गुण था। हालाँकि, वैदिक काल के उत्तरार्ध में और विशेषकर *धर्मसूत्रों* तथा *मनुस्मृति* जैसी ग्रंथों के उदय के बाद, वर्ण व्यवस्था धीरे-धीरे जन्म आधारित और कठोर हो गई। यहाँ तक कि शूद्रों के अधिकार सीमित कर दिए गए और उन्हें सामाजिक सीढ़ी में सबसे नीचे रखा गया। यही वह बिंदु था जहाँ **वर्ण व्यवस्था से जाति प्रथा** की ओर संक्रमण हुआ।

आधुनिक विद्वान भी इस पर अलग-अलग दृष्टिकोण रखते हैं। कुछ का मानना है कि मूल वैदिक वर्ण व्यवस्था **समन्वयकारी और लचीली** थी, जबकि बाद में सामाजिक वर्चस्व और शक्ति-संघर्ष के कारण यह **असमानता और शोषण का साधन** बन गई। डॉ. अंबेडकर ने भी अपने ग्रंथ *"जाति का उन्मूलन"* (Annihilation of Caste) में इस बात पर बल दिया कि शास्त्रों में वर्ण व्यवस्था के जन्म-आधारित स्वरूप ने भारतीय समाज को लंबे समय तक दमन और अन्याय की ओर धकेला। इस प्रकार, वैदिक कालीन ग्रंथों की समीक्षा से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रारंभिक अवस्था में वर्ण व्यवस्था का उद्देश्य समाज का **सामूहिक संगठन और श्रम विभाजन** था, लेकिन कालांतर में यह **जन्म-आधारित पदानुक्रम** में बदल गई। यही ऐतिहासिक परिवर्तन आधुनिक समय तक जाति प्रथा की जड़ बनने का कारण बना।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

डॉ. अंबेडकर का समाज-दर्शन जाति-विरोधी और समानता आधारित था। उन्होंने शास्त्रों में वर्ण व्यवस्था और उसके जन्म-आधारित स्वरूप की कड़ी आलोचना की। उनके अनुसार**, जातिगत भेदभाव न केवल सामाजिक अन्याय है बल्कि आर्थिक और राजनीतिक पिछड़ेपन का मुख्य कारण भी है।** अंबेडकर ने *जाति का उन्मूलन (Annihilation of Caste)* में स्पष्ट किया कि सामाजिक सुधार तभी संभव है जब जन्म आधारित असमानता को पूरी तरह समाप्त किया जाए। उन्होंने दलितों और पिछड़े वर्गों के अधिकारों के लिए शिक्षा, राजनीति और सामाजिक सशक्तिकरण को आवश्यक माना।

गांधी जी का दृष्टिकोण थोड़ा अलग था। उन्होंने 'अछूत' शब्द के स्थान पर 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया और समाज में **समानता और एकता** की दिशा में सुधार का मार्ग अपनाया। गांधी का मानना था कि समाज में सुधार **आंतरिक चेतना और धर्म के माध्यम से** होना चाहिए, न कि केवल कानूनी उपायों से। उन्होंने जातिगत भेदभाव को धार्मिक और सामाजिक दृष्टिकोण से चुनौती दी और हरिजन आन्दोलन के माध्यम से दलितों के उत्थान पर बल दिया।

अन्य प्रमुख समाज-सुधारकों जैसे **राजाराम मोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, स्वामी दयानंद सरस्वती और महर्षि कवलेश्वरनाथ** ने भी जाति और वर्ण व्यवस्था के दुरुपयोग के विरुद्ध सक्रिय भूमिका निभाई। रेव मोहन राय ने सती प्रथा और जातिगत भेदभाव के विरोध में कानूनी सुधार किए। विद्यासागर ने महिलाओं और दलितों के अधिकारों के लिए शिक्षा और पुनर्विवाह की दिशा में प्रयास किए। स्वामी दयानंद ने *आर्य समाज* के माध्यम से सामाजिक सुधार और धार्मिक चेतना का प्रसार किया। इन समाज-सुधारकों के विचारों में एक साझा धारा यह है कि **जाति और वर्ण व्यवस्था का दुरुपयोग समाज के विकास और समानता में बाधा डालता है।** अंबेडकर ने कानूनी और संरचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया, गांधी ने नैतिक और सामाजिक चेतना पर जोर दिया, जबकि अन्य सुधारक शिक्षा और धार्मिक जागरूकता के माध्यम से परिवर्तन की दिशा में कार्यरत रहे। इस प्रकार, उनके विचार यह संकेत देते हैं कि **जातिगत असमानता और वर्ण व्यवस्था की कठिनाइयाँ केवल कानून या नीति से नहीं, बल्कि समाज की सोच और दृष्टिकोण में परिवर्तन लाकर ही हल की जा सकती हैं।** आधुनिक समाज में इन विचारों का अध्ययन हमें सामाजिक न्याय और समानता की दिशा में मार्गदर्शन देता है।

समाजशास्त्रियों ने जाति व्यवस्था को केवल सामाजिक या धार्मिक पहलू से नहीं देखा, बल्कि इसे **सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक कारकों से जुड़ा हुआ सामाजिक तंत्र** माना। एमिल दुरखाइम **(Émile Durkheim)** – उन्होंने समाज को एक जीवंत प्रणाली माना, जिसमें जातिगत संरचना सामाजिक स्थिरता बनाए रखती है, लेकिन जब यह अन्यायपूर्ण हो जाए, तो समाज में तनाव और असमानता उत्पन्न होती है। **मैक्स वेबर (Max Weber) –** वेबर ने जाति को सामाजिक शक्ति और प्रतिष्ठा के दृष्टिकोण से देखा। उनके अनुसार जाति केवल जन्म आधारित विभाजन नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक अवसरों को प्रभावित करने वाला कारक है।

**भारतीय समाजशास्त्रियों –** मृदुला शर्मा, गोपाल कृष्णा, योगेश शर्मा जैसे शोधकर्ताओं ने भारत में जाति और वर्ण व्यवस्था के **आधुनिक प्रभाव** पर प्रकाश डाला। उनके अनुसार, जातिगत भेदभाव ने शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में असमानता पैदा की, और इसके चलते सामाजिक गतिशीलता सीमित हुई। इस समीक्षा से यह भी स्पष्ट होता है कि इतिहास, समाजशास्त्र और जेनेटिक विज्ञान का समन्वित विश्लेषण हमें जातिगत असमानताओं के प्रभाव और उनके समाधान के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण प्रदान करता है (Xing, 2009)।

चर्चा और परिणाम:

**जाति और आनुवंशिकी: एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण:**

भारत में जाति और वर्ण व्यवस्था की परंपरा सदियों पुरानी है। पारंपरिक वैदिक ग्रंथों में वर्ण व्यवस्था को अक्सर **'कर्म' के आधार** पर प्रस्तुत किया गया, यानी किसी व्यक्ति का सामाजिक वर्ग उसके कर्म, योग्यता और स्वभाव के अनुसार निर्धारित होता था। उदाहरण के लिए, ब्राह्मण को शिक्षा और ज्ञान के क्षेत्र में, क्षत्रिय को सुरक्षा और शासन में, वैश्य को व्यापार और कृषि में, और शूद्र को सेवा और श्रम में भूमिका दी गई थी। इस दृष्टिकोण में जाति स्थायी नहीं, बल्कि लचीली और योग्यता पर आधारित थी। लेकिन समय के साथ यह **कर्म आधारित विभाजन जन्म आधारित जाति व्यवस्था में बदल गया**। व्यक्ति का सामाजिक वर्ग अब उसके जन्म से तय होने लगा, न कि

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

उसके कर्म, प्रयास या योग्यता से। जन्म आधारित जातिगत भेदभाव ने सामाजिक असमानता और अवसरों की कमी को जन्म दिया। शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक भागीदारी में यह भेद स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा। इसके चलते सामाजिक गतिशीलता—यानि व्यक्ति की स्थिति में सुधार या उन्नति—कम हो गई। हाल के **जेनेटिक और डीएनए आधारित अध्ययन** यह स्पष्ट करते हैं कि जातियों के बीच जैविक अंतर न्यूनतम है Gharpure, 2024)। भारत में अलग-अलग जातियों और उपजातियों का जेनेटिक विश्लेषण करने पर पता चला कि **सभी जातियाँ एक ही मूल डीएनए साझा करती हैं**, और ऐतिहासिक रूप से जनसंख्या में मिश्रण और माइग्रेशन ने इसे और अधिक समान बनाया है।
यह शोध जातिगत भेदभाव के **जैविक या प्राकृतिक आधार** को खारिज करता है और यह सिद्ध करता है कि जाति **सामाजिक निर्माण है**, न कि जैविक आवश्यकता।

सामाजिक गतिशीलता और सांस्कृतिक विकास:

जाति के जन्म आधारित स्वरूप ने समाज में गतिशीलता को रोक दिया। हालांकि, शिक्षा, तकनीकी विकास और सामाजिक सुधार आंदोलनों के माध्यम से लोग धीरे-धीरे इस बाधा को पार कर रहे हैं। आधुनिक समाज में, **सामाजिक गतिशीलता और सांस्कृतिक विकास** को बढ़ावा देने के लिए कई उपाय अपनाए गए हैं, जैसे आरक्षण नीतियाँ, शिक्षा के अवसर, और सामाजिक जागरूकता अभियान। इसके अलावा, आधुनिक समाजशास्त्रियों का कहना है कि जाति केवल सामाजिक पहचान का माध्यम नहीं है, बल्कि यह **सामाजिक शक्ति और संसाधनों के वितरण को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारक** है। सांस्कृतिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि जातिगत भेदभाव को कम किया जाए और प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्म और क्षमता के आधार पर अवसर दिया जाए। अतीत में वर्ण व्यवस्था कर्म आधारित थी, लेकिन समय के साथ जन्म आधारित जाति ने समाज में असमानता को स्थायी कर दिया। आधुनिक जेनेटिक शोध यह प्रमाणित करता है कि **जातिगत भेदभाव का कोई जैविक आधार नहीं है,** और जातियाँ डीएनए स्तर पर समान हैं। सामाजिक गतिशीलता और सांस्कृतिक विकास तभी संभव है जब व्यक्ति को उसके कर्म, योग्यता और प्रयास के आधार पर अवसर मिले। यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि जातिगत भेदभाव को समाप्त करना केवल सामाजिक जागरूकता, नीति निर्माण और शिक्षा के माध्यम से संभव है। इस प्रकार, **कर्म आधारित जाति, जेनेटिक समानता और सामाजिक गतिशीलता** के सिद्धांत हमें एक न्यायपूर्ण और विकसित समाज की ओर ले जाते हैं।

## डॉ. अंबेडकर और धर्म परिवर्तन का विमर्श:

डॉ. भीमराव अंबेडकर ने भारतीय समाज में **जातिवाद की गहन आलोचना** की। उनका मानना था कि जन्म आधारित जातिगत भेदभाव केवल सामाजिक और आर्थिक असमानता को जन्म देता है बल्कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता और मानव गरिमा का भी हनन करता है। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि **जातिवाद न तो धार्मिक आवश्यकतानुसार है और न ही नैतिक रूप से सही**, बल्कि यह समाज में शक्ति और संसाधनों के असमान वितरण का माध्यम है। अंबेडकर ने अपने लेखन और सार्वजनिक जीवन में दलितों के अधिकारों और समान अवसरों के लिए संघर्ष किया। जातिवाद और सामाजिक असमानता से मुक्ति पाने के प्रयास में अंबेडकर ने बौद्ध धर्म को अपनाया। उनका तर्क यह था कि **बौद्ध धर्म जन्म आधारित सामाजिक भेदभाव को अस्वीकार करता है** और प्रत्येक व्यक्ति की नैतिक और बौद्धिक क्षमता को महत्व देता है। बौद्ध धर्म में मानवता, करुणा और समानता के सिद्धांत मौजूद हैं, जो जाति-भेद और सामाजिक असमानता को चुनौती देते हैं। 1956 में डॉ. अंबेडकर ने अपने अनुयायियों के साथ बड़े पैमाने पर बौद्ध धर्म अपनाया, इसे **दलितों के लिए सामाजिक और आध्यात्मिक मुक्ति का मार्ग** बताया। डॉ. अंबेडकर ने धर्म परिवर्तन के विकल्पों पर भी विचार किया। उन्होंने देखा कि **इस्लाम और ईसाई धर्म जातिवाद से मुक्ति का वादा करते हैं**, लेकिन सामाजिक और सांस्कृतिक जटिलताएँ इसे अपनाने में बाधक बनती हैं। उदाहरण के लिए, इन धर्मों में प्रवेश करने पर भाषा, सांस्कृतिक परंपरा और सामाजिक पहचान बदल जाती है, जिससे व्यक्ति नई चुनौतियों का सामना करता है। इसके अलावा, दलित समुदाय के लिए बड़े पैमाने पर धर्म परिवर्तन करना सामूहिक रूप से कठिन था, क्योंकि यह सामाजिक ताने-बाने और स्थानीय समर्थन को प्रभावित करता था। अंबेडकर ने यह स्पष्ट किया कि **धर्म परिवर्तन केवल आध्यात्मिक मुक्ति का साधन नहीं**, बल्कि सामाजिक मुक्ति का भी माध्यम हो सकता है। बौद्ध धर्म को अपनाने का उनका निर्णय यह दर्शाता है कि उन्होंने जातिवाद से मुक्ति के लिए **व्यवस्थित और व्यावहारिक विकल्प** चुने। हालांकि, धर्म परिवर्तन नई चुनौतियाँ भी लाता है—सामाजिक अलगाव, पूर्वाग्रह, सांस्कृतिक असमानता और नए समुदाय में आत्मिक पहचान की खोज।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

अंबेडकर ने यह सुझाव दिया कि मुक्ति तभी पूर्ण होगी जब धर्म परिवर्तन **समानता और मानवाधिकारों की रक्षा करने वाला हो**। डॉ. अंबेडकर का दृष्टिकोण जातिवाद और धर्म परिवर्तन पर स्पष्ट, तार्किक और सामाजिक रूप से प्रगतिशील था। उन्होंने देखा कि **जातिवाद केवल सामाजिक संरचना की विफलता नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक संकट भी है**। उनके बौद्ध धर्म की ओर झुकाव ने दलित समुदाय को सामाजिक समानता, आत्म-सम्मान और सांस्कृतिक पहचान प्रदान की। इसके विपरीत, इस्लाम और ईसाई धर्म में प्रवेश करने की जटिलताएँ यह दर्शाती हैं कि धर्म परिवर्तन केवल आध्यात्मिक विकल्प नहीं, बल्कि सामाजिक रणनीति भी है। अंबेडकर का दृष्टिकोण आज भी जातिवाद और सामाजिक समानता के अध्ययन में मार्गदर्शक है।

**आधुनिक समाज के लिए विमर्श:**

भारतीय समाज में जातिवाद का इतिहास अति प्राचीन है। यह सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक क्षेत्रों में भेदभाव का माध्यम बन चुका था। जातिवाद केवल व्यक्तियों के अवसरों को सीमित नहीं करता, बल्कि **समाज के समग्र विकास और राष्ट्र की प्रगति को बाधित** करता है। ऐसे में जातिवाद के खिलाफ सामाजिक न्याय आंदोलन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह आंदोलन केवल दलितों और पिछड़े वर्गों के अधिकारों की लड़ाई नहीं था, बल्कि **समानता, शिक्षा और सामाजिक चेतना** के लिए व्यापक आंदोलन था। सामाजिक न्याय आंदोलन के पीछे कई विचारकों और नेताओं का योगदान रहा। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने जातिवाद को **सामाजिक और नैतिक असमानता का मूल कारण** बताया। उनके अनुसार जन्म आधारित जातिवाद व्यक्तिगत स्वतंत्रता और गरिमा का हनन करता है। उन्होंने शिक्षा, संवैधानिक अधिकार और सार्वजनिक जीवन में समावेश के माध्यम से दलितों को सशक्त बनाने का मार्ग सुझाया। महात्मा गांधी ने भी **सत्याग्रह और आंदोलन के माध्यम से अस्पृश्यता और जातिगत भेदभाव** को चुनौती दी। हालांकि उनका दृष्टिकोण जातिवाद को पूरी तरह समाप्त करने के बजाय सुधारात्मक था, फिर भी उन्होंने सामाजिक चेतना और सहयोग के माध्यम से समानता की दिशा में कदम बढ़ाया। इसके अलावा, आधुनिक समाजशास्त्री और वैश्विक मानवाधिकार कार्यकर्ता भी सामाजिक न्याय और समानता के आंदोलन को आगे बढ़ा रहे हैं। जातिवाद से मुक्ति के लिए शिक्षा को सबसे महत्वपूर्ण माध्यम माना गया।

अंबेडकर और अन्य समाज-सुधारकों ने स्पष्ट किया कि **शिक्षा ही दलितों और पिछड़े वर्गों को सामाजिक सशक्तिकरण की दिशा में ले जा सकती है**। संविधान में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण और समान अधिकार सुनिश्चित किए गए। सामाजिक न्याय की दिशा में संविधान ने कई उपाय किए, जैसे समान नागरिक अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, और रोजगार व राजनीति में आरक्षण। ये उपाय न केवल आर्थिक और सामाजिक असमानताओं को कम करते हैं, बल्कि **समाज में सांस्कृतिक पुनर्निर्माण और समानता की भावना** को भी प्रोत्साहित करते हैं।

आधुनिक विज्ञान ने जातिवाद के खिलाफ मजबूत तर्क प्रदान किए हैं। **जेनेटिक शोधों के अनुसार, सभी मानव जातियों का डीएनए लगभग समान है** (Reich, et al. 2009)**।** यह दर्शाता है कि जातिगत भेदभाव का कोई जैविक आधार नहीं है, और जातिवाद केवल सामाजिक निर्माण है (Gharpure, 2024)। समाजशास्त्र और इतिहासिक अध्ययन भी यह प्रमाणित करते हैं कि जातिवाद समाज की गतिशीलता और आर्थिक विकास के लिए बाधक है। जेनेटिक्स और समाजशास्त्र का संयुक्त निष्कर्ष स्पष्ट करता है कि **जातिवाद मानव विकास के खिलाफ है**, और इसके उन्मूलन के लिए नीति, शिक्षा और सामाजिक चेतना आवश्यक हैं (Khedkar, 2024। यह निष्कर्ष आधुनिक सामाजिक न्याय आंदोलनों और संवैधानिक उपायों की वैधता और आवश्यकता को पुष्ट करता है। जातिवाद के खिलाफ आंदोलन केवल भारत तक सीमित नहीं है। वैश्विक स्तर पर समानता, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय को महत्व दिया जा रहा है। दलित और पिछड़े वर्गों का सामाजिक उत्थान केवल व्यक्तिगत या राष्ट्रीय उपलब्धि नहीं है, बल्कि **वैश्विक मानवता के दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण** है। सामाजिक न्याय और जातिवाद के खिलाफ आंदोलन ने न केवल **वैश्विक पहचान** बनाई है, बल्कि सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की प्रक्रिया को भी प्रेरित किया है। यह प्रक्रिया शिक्षा, साहित्य, मीडिया और सामाजिक आंदोलनों के माध्यम से व्यापक स्तर पर विकसित हो रही है। दलित साहित्य, सामाजिक कार्य और वैश्विक मंच पर अधिकारों की वकालत ने भारतीय समाज में सांस्कृतिक पुनर्निर्माण को गति दी है (Moorjani, Sequeira, & Bhattacharyya, 2025)।

जातिवाद के खिलाफ सामाजिक न्याय आंदोलन ने भारतीय समाज को **समानता, शिक्षा और संवैधानिक अधिकारों** की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाने के लिए प्रेरित किया। डॉ. अंबेडकर और गांधी जैसे समाज-सुधारकों के प्रयासों ने केवल सामाजिक चेतना को

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

जागृत नहीं किया, बल्कि **वैज्ञानिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आधार** प्रदान किए। आधुनिक जेनेटिक शोध और समाजशास्त्र यह स्पष्ट करते हैं कि जातिवाद का कोई प्राकृतिक या जैविक आधार नहीं है। यह केवल सामाजिक निर्माण है, जिसे **शिक्षा, संवैधानिक उपाय और सामाजिक आंदोलनों** के माध्यम से समाप्त किया जा सकता है। वैश्विक स्तर पर पहचान और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण के प्रयास यह दिखाते हैं कि सामाजिक न्याय केवल भारत के लिए नहीं, बल्कि मानवता के लिए भी महत्वपूर्ण है। इस प्रकार, जातिवाद के खिलाफ आंदोलन, शिक्षा और संवैधानिक उपाय, और विज्ञान व समाजशास्त्र से प्राप्त निष्कर्ष मिलकर एक **समान और न्यायपूर्ण समाज** के निर्माण में सहायक हैं। यह अध्ययन हमें यह समझने में मदद करता है कि **अतीत की चुनौतियों और आधुनिक विज्ञान के ज्ञान** के बीच संतुलन स्थापित करके ही वास्तविक सामाजिक सुधार संभव है।

## निष्कर्ष:

भारतीय समाज में जाति का प्रश्न सदियों से चर्चा का विषय रहा है। परंपरागत रूप से जाति को जन्म आधारित सामाजिक विभाजन के रूप में देखा गया है, लेकिन आधुनिक समाजशास्त्र, इतिहास और जेनेटिक विज्ञान इस परंपरा को चुनौती देते हैं। यह स्पष्ट हो गया है कि **जाति कोई जैविक सत्य नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना है।** जेनेटिक अनुसंधानों ने यह प्रमाणित किया है कि सभी मानव जातियों का डीएनए लगभग समान है। इससे यह सिद्ध होता है कि जाति जन्म आधारित नहीं है, बल्कि यह केवल सामाजिक नियमों, परंपराओं और सांस्कृतिक प्रथाओं का परिणाम है। जातिवाद का वास्तविक आधार सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना है, न कि जैविक अंतर। यह समझने के लिए इतिहास में लौटना आवश्यक है। वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख मिलता है, जिसमें समाज को चार मुख्य वर्गों में बाँटा गया था—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। प्रारंभिक वैदिक दृष्टिकोण में यह व्यवस्था जन्म के आधार पर नहीं, बल्कि **कर्म और योग्यता** के आधार पर निर्धारित की गई थी। व्यक्ति का सामाजिक स्थान उसके ज्ञान, योग्यता और आचरण से तय होता था। समय के साथ, समाज में यह व्यवस्था स्थायी जन्म आधारित जातियों में बदल गई। यह परिवर्तन मुख्य रूप से सामाजिक और राजनीतिक कारणों से हुआ, जिससे जाति का दुरुपयोग और असमानता बढ़ी। आधुनिक विज्ञान और समाजशास्त्र ने इसे स्पष्ट रूप से देखा और प्रमाणित किया है कि जाति कोई प्राकृतिक विभाजन नहीं है। जेनेटिक अध्ययन यह दिखाते हैं कि सभी मानवों का डीएनए लगभग समान है, और भौतिक या मानसिक गुणों में कोई विशेष जातीय अंतर नहीं है। समाज में असमानता का वास्तविक कारण सामाजिक भेदभाव, अवसरों की कमी और पारंपरिक रूढ़िवाद है। इस दृष्टिकोण से जाति केवल **सामाजिक निर्माण** है, और इसे सुधारने या समाप्त करने की क्षमता समाज में नीतियों, शिक्षा और सामाजिक चेतना के माध्यम से संभव है। डॉ. भीमराव अंबेडकर का जीवन और संघर्ष इस दृष्टिकोण का प्रत्यक्ष उदाहरण है। अंबेडकर ने जातिवाद के खिलाफ अपने पूरे जीवन में संघर्ष किया और दलितों के अधिकारों के लिए कानूनी, शैक्षिक और सामाजिक उपायों को लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनका दृष्टिकोण स्पष्ट था कि जातिवाद केवल सामाजिक बाधा नहीं, बल्कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता और गरिमा का हनन है। अंबेडकर का बौद्ध धर्म की ओर झुकाव इस बात का प्रतीक है कि व्यक्ति अपने धर्म और आस्था का चुनाव स्वतंत्र रूप से कर सकता है, और यह चुनाव जातिगत भेदभाव से मुक्ति का मार्ग भी हो सकता है। उन्होंने इस्लाम और ईसाई धर्म में जाति आधारित असमानता के पहलुओं का भी अध्ययन किया, लेकिन उनके लिए बौद्ध धर्म अधिक संगत और जातिगत मुक्ति का प्रतीक था। जातिवाद के खिलाफ आंदोलन ने भारतीय समाज में **समानता और सामाजिक न्याय** की नींव मजबूत की। संविधान द्वारा लागू किए गए उपाय जैसे आरक्षण, शिक्षा में समान अवसर, और संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा, जाति आधारित भेदभाव को कम करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। आधुनिक समाजशास्त्रियों और वैज्ञानिकों ने यह भी सुझाया है कि सामाजिक गतिशीलता और सांस्कृतिक विकास जातिवाद की दीवारों को धीरे-धीरे तोड़ सकते हैं। जब समाज में शिक्षा, अवसर और सामाजिक चेतना का प्रसार होता है, तब जाति आधारित भेदभाव की संभावना कम होती है। वर्तमान समय में भी जाति का प्रभाव सामाजिक और आर्थिक अवसरों पर दिखाई देता है। हालांकि वैज्ञानिक दृष्टिकोण और संवैधानिक उपाय इसे कम करने का प्रयास कर रहे हैं, फिर भी सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की आवश्यकता है। वैश्विक स्तर पर भी जातिवाद के खिलाफ जागरूकता बढ़ रही है।

जेनेटिक और समाजशास्त्रीय अनुसंधान यह पुष्टि करते हैं कि सभी मानव समान हैं, और किसी के जन्म या परिवार की पृष्ठभूमि के आधार पर असमानता अस्वीकार्य है। अंततः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि **जाति केवल एक सामाजिक संरचना है, जिसका कोई जैविक आधार नहीं है।** वैदिक दृष्टिकोण और आधुनिक विज्ञान दोनों इस बात की पुष्टि करते हैं कि समाज में समानता और कर्मप्रधान जीवन ही व्यक्तियों और राष्ट्र के समग्र विकास का आधार हैं। अंबेडकर का संघर्ष जातिगत मुक्ति का प्रतीक है, जिसे आधुनिक

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :9.014(2025); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
PEER REVIEWED AND REFEREED INTERNATIONAL JOURNAL
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:14, Issue:11(1), November, 2025
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

समाज वैज्ञानिक और संवैधानिक उपायों के माध्यम से आगे बढ़ा सकते हैं। सामाजिक न्याय, शिक्षा, संवैधानिक अधिकार और जागरूकता ही जातिवाद के वास्तविक उन्मूलन का मार्ग हैं। जाति आधारित भेदभाव का प्रभाव केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं, बल्कि समाज के समग्र विकास पर भी पड़ता है। इसलिए सामाजिक आंदोलनों, शिक्षा और सांस्कृतिक चेतना के माध्यम से जातिवाद को समाप्त करना अनिवार्य है। यह न केवल व्यक्तिगत स्वतंत्रता और समानता की रक्षा करता है, बल्कि समाज की नैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक उन्नति का भी मार्ग प्रशस्त करता है। इस प्रकार, अतीत और वर्तमान के अध्ययन, सामाजिक न्याय आंदोलनों और आधुनिक विज्ञान के निष्कर्ष मिलकर यह संदेश देते हैं कि जातिवाद का वास्तविक मुकाबला **शिक्षा, समान अवसर और संवैधानिक सुरक्षा** के माध्यम से ही संभव है। अंबेडकर का संघर्ष हमें यह सिखाता है कि सामाजिक चेतना और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के माध्यम से जातिवाद जैसी प्राचीन समस्याओं का स्थायी समाधान निकाला जा सकता है।

**संदर्भ:**

1. ऋग्वेद. *पुरुष सूक्त श्लोक*: https://www.sacred-texts.com/hin/rigveda/
2. मनुस्मृति. *अध्याय 8, श्लोक 271*: https://www.sacred-texts.com/hin/manu/manu8.htm
3. महाभारत. *धर्म से संबंधित विभिन्न श्लोक*: https://www.sacred-texts.com/hin/maha/index.htm
4. अंबेडकर, बी. आर. (1990). *जाति का उन्मूलन: एक अप्रसारित भाषण*. नई दिल्ली: अर्नोल्ड पब्लिशर्स.
5. अंबेडकर, बी. आर. (2017). *बुद्ध और उनका धर्म*. कालपज़ पब्लिकेशंस.
6. Egorova, Y. (2010). Castes of genes? Representing human genetic diversity in India. *LS: The Journal of Life Sciences*, 6(3), 32: https://lsspjournal.biomedcentral.com/articles/10.1186/1746-5354-6-3-32
7. Xing, J. (2009). Fine-scaled human genetic structure revealed by SNP genotyping. *PLoS Genetics*, 5(6), e1000557: https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC2675970/
8. Dumont, L. (1970). *Homo Hierarchicus: The Caste System and Its Implications*. University of Chicago Press: https://press.uchicago.edu/ucp/books/book/chicago/H/bo25135790.html
9. Ghurye, G. S. (1950). *Caste and Race in India*. Popular Prakashan: https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.69673
10. GenomeIndia Project. (2025). Mapping genetic diversity with the GenomeIndia project. *Nature Genetics*, 57(4), 767-773: https://pubmed.ncbi.nlm.nih.gov/40200122/
11. Moorjani, P. (2025). Scientists complete the most thorough analysis yet of India's genetic diversity. *UC Berkeley News*: https://news.berkeley.edu/2025/06/26/scientists-complete-the-most-thorough-analysis-yet-of-indias-genetic-diversity/
12. Sequeira, J., & Mustak, M. S. (2025). Mangaluru varsity study shows shared paternal ancestry among Brahmins across India. *Times of India*: https://timesofindia.indiatimes.com/city/mangaluru/mangaluru-varsity-study-shows-shared-paternal-ancestry-among-brahmins-across-india/articleshow/123369852.cms
13. Gujarat Biotechnology Research Centre. (2025). Gujarat to launch tribal genome mapping project across 17 districts. *Times of India*: https://timesofindia.indiatimes.com/city/ahmedabad/gujarat-to-launch-tribal-genome-mapping-project-across-17-districts/articleshow/122589942.cms
14. Bhattacharyya, C. (2025). Decoding India's genetic diversity: The Genome India Project. *Rajiv Gandhi Cancer Institute & Research Centre*: https://www.rgcirc.org/blog/decoding-indias-genetic-diversity-the-genome-india-project/
15. Khedkar, S. (2024). India maps genomic diversity with nationwide project. *The Scientist*: https://www.the-scientist.com/india-maps-genomic-diversity-with-nationwide-project-72730
16. Gharpure, S. (2024). What DNA testing reveals about India's caste system. *Harvard Medical School News*: https://hms.harvard.edu/news/what-dna-testing-reveals-about-indias-caste-system
17. Reich, D., et al. (2009). Castes of genes? Representing human genetic diversity in India. *LS: The Journal of Life Sciences*, 6(3), S9-S14: https://lsspjournal.biomedcentral.com/articles/10.1186/1746-5354-6-3-32